# बरास्ता सम्पादन

## बच्चों के कहन पर भारी, बड़ों का भाषा ज्ञान

**अनिल सिंह**

सम्पादन अपने आप में एक अहम और विशिष्ट काम हो सकता है। हो सकता है इसके लिए अलग तरह के भाषाई ज्ञान और नज़रिए की भी आवश्यकता हो पर आठ साल की बच्ची की एक पेज की कहानी पर टीचर का भाषा ज्ञान और उसका नज़रिया, सम्पादन के रास्ते जो अपेक्षाएँ थोपता है उस पर ठहरकर सोचने और समालोचनात्मक नज़र से देखने की ज़रूरत है।

यहाँ माजरा 8 साल की एक बच्ची द्वारा लिखी गई एक कहानी का है जिसे एक शिक्षक महोदय इस उद्देश्य से ले लेते हैं कि वो उसे भाषा और कहन की दृष्टि से चुस्त-दुरुस्त बना देंगे।

जब हम यहाँ कहानी और उसके सम्पादन की प्रक्रिया पर बात करते हुए आगे बढ़ेंगे तो हम समझ पाएँगे कि बच्चे अपनी बातों को कितने पूरेपन में अभिव्यक्त कर रहे होते हैं, और हम वयस्क रूढ़ भाषा, संकीर्ण दृष्टि और छबियों के चलते उसमें तरह-तरह की खोट निकालते हैं।

बच्चों की रचनाओं पर हमारी प्रतिक्रिया कैसी हो, सुधार और शुद्धता के प्रति हमारा आग्रह क्या और कैसा होना चाहिए, वगैरह वगैरह पर स्कूल में हम अक्सर चर्चाएँ करते हैं। इसी तारतम्य में शिक्षक कहानी का टाइप किया हुआ सम्पादित पेज लेकर आए और उस पर चर्चा करने लगे। पेज पर सम्पादन का उनका हुनर काट-पीट की शक्ल में दिख रहा था। मैंने सबसे पहले यही पूछा कि "यह सम्पादित पेज आपने बच्ची को तो नहीं दिखाया?" उन्होंने कहा, "अभी तो नहीं।" मुझे बड़ी राहत हुई। मैंने कहा, "दिखाइएगा भी नहीं।"

बात कहानी के शीर्षक से शुरू होती है जो है 'मेरी कहानी'। अव्वल तो यह शीर्षक ही इस बात की घोषणा कर देता है कि यह कहानी नितान्त निजी रचना है, यह जैसी भी है लिखने वाली की है। इसे पढ़ें, इसका रस लें, इस पर अनावश्यक कलम न चलाएँ।

पहली पंक्ति पर गौर करें। इसमें किए सम्पादन पर दलील थी कि कहानी की शुरुआत बाहरी भौतिक विश्लेषण से हो रही है। पहले एक तरफ से वह पूरा हो जाना चाहिए, उसके बाद

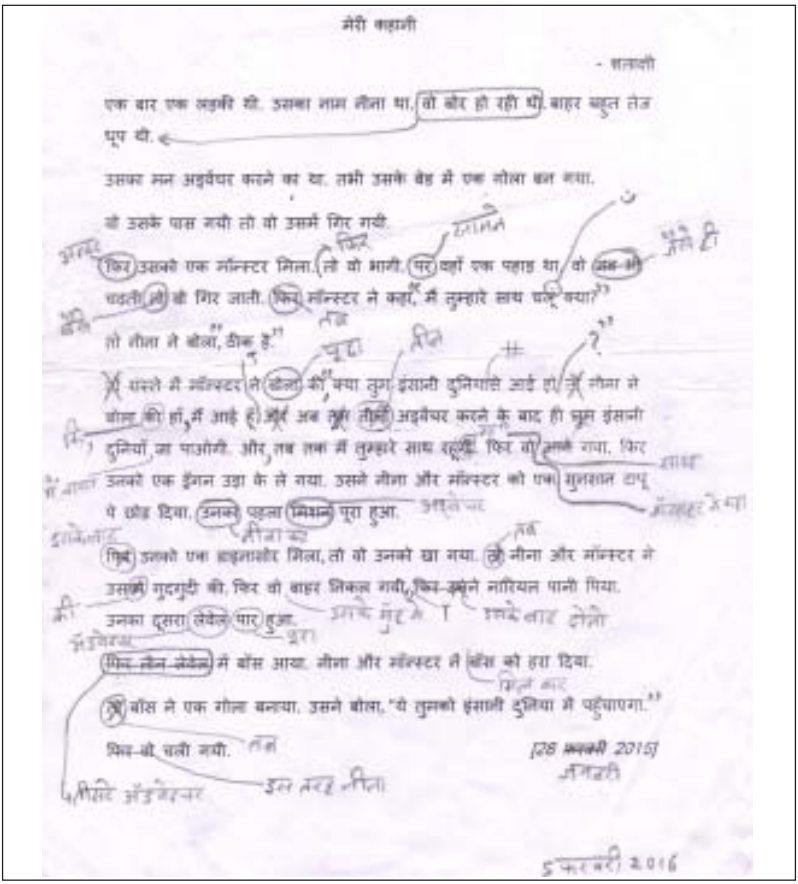

मेरी कहानी

एक बार एक लड़की थी. उसका नाम नीना था. वो बोर हो रही थी. बाहर बहुत तेज धूप थी.

उसका मन अडवेंचर करने का था. तभी उसके बेड में एक गोला बन गया.

वो उसके पास गयी तो वो उसमें गिर गयी.

फिर उसको एक मॉन्स्टर मिला. तो वो भागी. पर वहाँ एक पहाड़ था, वो अब जो चढ़ती तो वो गिर जाती. फिर मॉन्स्टर ने कहा, "मैं तुम्हारे साथ चलूँ क्या?"

तो नीना ने बोला, "ठीक है."

और रास्ते में मॉन्स्टर ने बोला की, "क्या तुम इंसानी दुनिया से आई हो?" और नीना ने बोला की, "हाँ, मैं आई हूँ." और अब तुम तीनों अडवेंचर करने के बाद ही तुम इंसानी दुनिया जा पाओगी. और तब तक मैं तुम्हारे साथ रहूँगा. फिर वो उड़ गया. फिर उनको एक ईगल उठा के ले गया. उसने नीना और मॉन्स्टर को एक सुनसान टापू पे छोड़ दिया. उनका पहला मिशन पूरा हुआ.

फिर उनको एक डाइनासोर मिला, तो वो उनको खा गया. तो नीना और मॉन्स्टर ने उसको गुदगुदी की. फिर वो बाहर निकल गयी. फिर उन्होंने नारियल पानी पिया.
उनका दूसरा लेवेल पार हुआ.

फिर तीन लेवेल में बॉस आया. नीना और मॉन्स्टर ने बॉस को हरा दिया.

और बॉस ने एक गोला बनाया. उसने बोला, "ये तुमको इंसानी दुनिया में पहुँचाएगा."

फिर वो चली गयी.

[28 जनवरी 2015]

5 फरवरी 2016

कोई भावनात्मक या अन्तस का विवरण आना चाहिए। यह बीच में नहीं आना चाहिए। सो उन्होंने 'वो बोर हो रही थी' वाला वाक्यांश उठाकर अन्त में रख दिया। गोया वो यह कहना चाह रहे थे कि पहले बाहरी और बुनियादी विवरण पूरा हो जाए। 'एक बार एक लड़की थी। उसका नाम नीना था। बाहर बहुत तेज़ धूप हो रही थी।' इसके बाद उसके अन्तस का विवरण या मनःस्थिति - वो बोर हो रही थी - का ज़िक्र किया जाना चाहिए क्योंकि यह बाहरी विवरण से बिलकुल भिन्न बात है, इसलिए उस विवरण के बीच में यह बात कुछ जँचती नहीं है, फिट नहीं बैठती।

मैंने बहुत ही सरल शब्दों में कहा

कि बच्ची ने जब लिखना शुरू किया तो उसके पास एक किरदार था – एक लड़की, उसका नाम नीना था। बात तो लड़की की ही हो रही है – वह बोर हो रही थी। फिर कहीं बाद में यह बात आती है कि – बाहर बहुत तेज़ धूप थी। कहानी के शिल्प से कहीं ज़्यादा महत्वपूर्ण एक ज़िन्दा किरदार की भावनात्मक स्थिति है। बाहर तेज़ धूप थी या नहीं थी, सुबह थी या शाम थी, यह तो सेकण्डरी मैटर है। उसका ज़िक्र न भी होता तो कुछ न बिगड़ता। सम्पादक महोदय ने गम्भीरता में सिर हिलाया। इस पर उनकी सहमति थी। "हाँ, आप ठीक कह रहे हैं। वास्तव में मैं भाषा और कहन की दृष्टि से देख रहा था, जबकि आप उस लड़की किरदार और उस लिखने वाली बच्ची की बात कर रहे हैं जो कि निश्चित रूप से ज़्यादा महत्वपूर्ण है। इसलिए उसके अन्तस का विवरण भी उतना ही महत्वपूर्ण है।"

सो पहली सम्पादकीय पहल को उन्होंने समझा और वापस ले लिया। अब बात पाँचवीं पंक्ति पर आई जहाँ उन्होंने 'फिर' पर गोला लगाकर उसके स्थान पर 'अन्दर' लिख दिया था। उनकी दलील थी कि चूँकि वह गोले में गिरी है तो उसकी निरन्तरता में आगे यही आना चाहिए कि – अन्दर उसको एक मॉन्स्टर मिला। मैंने पहले की पंक्तियों पर फिर से नज़र डाली, उसने लिखा था 'उसका मन एडवेंचर करने का था। तभी उसके बेड में एक गोला बन गया, वो उसके पास गई तो वो उसमें गिर गई।' मैंने कहा, "बिलकुल ठीक। जब वह लिखती है कि 'वो उसमें गिर गई' तो उसने विज़ुअलाइज़ कर रखा है एक गोला, जिसके अन्दर वो आ गई है। अब वह उस दृश्य में है, उसके अन्दर है, इसलिए वह लिखती है 'फिर उसको एक मॉन्स्टर मिला'। शब्दों से बहुत आगे निकलकर वह उस दृश्य में चली गई है। उसे कतई ज़रूरत नहीं पड़ी 'अन्दर' शब्द लिखने की। यह हमारी सीमा है कि हम दृश्य नहीं बना पा रहे, लिखने वाली उस बच्ची के साथ नहीं हो पा रहे। इसलिए हमारी गाड़ी अटक रही है। हमें 'अन्दर' शब्द लिखने की ज़रूरत पड़ रही है।"

इसी तरह अगले वाक्य में फिर एक संशोधन था। बच्ची ने लिखा 'फिर उसको एक मॉन्स्टर मिला तो वो भागी, पर वहाँ एक पहाड़ था'। शिक्षक महोदय ने भाषा संरचना के अपने ज्ञान और समझ के अनुसार 'पर' शब्द पर गोला लगाकर उसकी जगह 'सामने' लिख दिया। उनका तर्क था कि जब वो भागी तो – सामने वहाँ एक पहाड़ था – ऐसा लिखना सही होगा। जाने वह किस आधार पर कह रहे थे। शायद अबकी बार वह 'सामने' शब्द का इस्तेमाल कर दृश्य बनाना चाह रहे थे जो उनके लिहाज़ से कहानी के लिए बहुत ज़रूरी था। पर बच्ची ने जब लिखा तब दृश्य तो बनाया ही होगा, निश्चित रूप से

उसने पहाड़ भी देखा होगा। और यह भी उतना ही सच कि जब देखा वह सामने ही था। तभी तो उसने 'सामने' शब्द का ज़िक्र किए बगैर पूरी रवानी में लिखा कि 'वो भागी, पर वहाँ एक पहाड़ था'। यह नज़र हम वयस्कों की क्यों नहीं हो पाती? क्यों हमें निहित भाव और कल्पना से ज़्यादा भरोसा एक शब्द पर होता है जो कि निहायत ही कृत्रिम और आभासी है?

आगे बढ़ते ही बच्ची ने लिखा, 'वो जब भी चढ़ती तो वो गिर जाती'। कितना स्पष्ट उल्लेख है और क्रिया भी सम्पूर्ण अर्थ लिए हुए। पर शिक्षक महोदय ने इस पर सम्पादकीय कलम चलाते हुए लिखा 'वो जैसे ही चढ़ती, वैसे ही वो गिर जाती'। बच्ची के यह कहने पर कि 'वो जब भी चढ़ती तो वो गिर जाती' उन्हें, चढ़ने के प्रयास में उसी क्षण गिरने का अर्थ बोध नहीं हो रहा था। इसलिए उन्हें 'जैसे ही' और 'वैसे ही' जैसे शब्दों की ज़रूरत महसूस हुई, बच्ची को नहीं।

कहानी में आगे लिखा था, 'रास्ते में मॉन्स्टर ने बोला क्या तुम इन्सानी दुनिया से आई हो?' महोदय ने 'बोला' के स्थान पर 'पूछा' लिख दिया। " 'क्या तुम इन्सानी दुनिया से आई हो', यह बात तो पूछने की है," सम्पादक महोदय ने तर्क दिया। "पर बच्ची के लिए तो वह 'मॉन्स्टर बोला' ही होगा", मैंने कहा। पूछने का अर्थ तो घटना, स्थिति और बात में निहित ही है। और इसके लिए बच्ची ने कोई प्रश्नवाचक चिन्ह भी नहीं लगाया, जिसे सम्पादक महोदय ने लगा ही दिया। हमारी सम्पादकीय दृष्टि हर समय संरचना के यांत्रिक स्वरूप में ही अटकती रहती है। बच्चों के लेखन में हम अक्सर ही निहित अर्थ, गहरे भाव या निर्मित होने वाले दृश्यों को नज़रअन्दाज़ कर रहे होते हैं।

बच्ची ने एक जगह लिखा, 'और अब तुम तीनों एडवेंचर करने के बाद ही इन्सानी दुनिया जा पाओगी'। ज़ाहिर है वह बिस्तर में बने गोले में गिरकर इस मॉन्स्टर और एडवेंचर की दुनिया में आ गई थी। तीनों एडवेंचर करने के बाद ही इन्सानी दुनिया में जा पाएगी। 'वापसी' का भाव भी वाक्य में ही निहित है कि जिस दुनिया से

वह आई है उसी दुनिया में उसे जाना है। यह वापसी ही तो होगी। इसके लिए 'वापस' शब्द लिखना सम्पादकीय ज़रूरत हो सकती है पर बच्ची को यह कतई ज़रूरी नहीं लगा और उसकी बात भी स्पष्ट रही।

बच्ची ने अपनी कहानी में आगे एक जगह लिखा, 'उनका पहला मिशन पूरा हुआ'। सम्पादक महोदय ने 'उनका' के स्थान पर 'नीना का' कर दिया। उनका मानना रहा कि मिशन या एडवेंचर पूरा करने की शर्त तो नीना के लिए है, इसलिए यह उपलब्धि नीना के लिए है कि उसने पहला मिशन पूरा किया। पर सम्पादक महोदय ने इस बात को बिलकुल गम्भीरता से नहीं लिया कि इस सफर में मॉन्स्टर उसके साथ हो लिया। बच्ची ने साफ लिखा है कि 'उन दोनों को एक ड्रैगन उड़ा के ले गया। उसने नीना और मॉन्स्टर को एक सुनसान टापू पर छोड़ दिया'। सब कुछ दोनों के साथ हो रहा था, दोनों के सामने एक-ही संकट है, फिर कैसे यह मिशन सिर्फ नीना का हुआ? बच्ची ने मॉन्स्टर और नीना को एक पार्टी माना है और इसलिए वह लिखती है कि 'उनका पहला मिशन पूरा हुआ'। मॉन्स्टर और इन्सान की यह साझेदारी बच्ची के मन में तो साफ थी पर सम्पादक महोदय इससे इत्तेफाक नहीं रख रहे थे। बच्ची की कल्पना और उसके मनोभावों को जगह व तरजीह देने की बजाए वह भाषा की संरचना और कहानी के सपाट तर्क को ज़्यादा अहमियत दे रहे थे। साझेदारी की इस दलील को उन्होंने मान ज़रूर लिया लेकिन कथानक और भाषा की दृष्टि से वह इसे असंगत ही मान रहे थे।

कहानी में आगे जब उनको एक डायनासौर खा गया तो नीना और मॉन्स्टर ने उसको गुदगुदी की। फिर वो बाहर निकल गई। ज़ाहिर है कि गुदगुदी करने से डायनासौर को हँसी आई, वह हँसने लगा। हँसने से उसका मुँह खुला और नीना डायनासौर के मुँह से बाहर निकल गई। दृश्य बिलकुल पूरा और तार्किक है कि नीना डायनासौर के मुँह से ही निकली। पर सम्पादक महोदय को यह दृश्य दिखा ही नहीं और उन्होंने कहानी का दृश्य बनाने

के लिए या यों कहें भाषा की गरज से उसमें जोड़ दिया 'उसके मुँह से'। अब वाक्य कुछ यों बना 'फिर वो उसके मुँह से बाहर निकल गई'। सम्पादन तो हो गया पर यह बच्ची के अभिव्यक्ति कौशल और तार्किक दृश्य निर्माण बुद्धि को सरासर नकारना हुआ। उस पर भरोसा न करना हुआ।

ऐसे ही बच्ची ने लिखा, 'फिर उनने नारियल पानी पिया'। महोदय ने 'उनने' की जगह लिखा 'दोनों ने'। 'उनने' अपने आप में मुकम्मल शब्द है और उसका प्रयोग भी समुचित तरीके से हुआ। पर सम्पादक महोदय की नज़र में यह उपयुक्त न था, शायद उन्हें शुद्धता की दृष्टि से यह जमा नहीं। वह यह मानने को तैयार नहीं थे कि ऐसा कोई शब्द है भी। बोलचाल की भाषा के इस शब्द को मान्यता देने में वह सहज न थे। बच्ची ने जब लिखा, 'उनका दूसरा लेवल पार हुआ' तो साहब ने 'पार हुआ' काटकर लिखा, 'पूरा हुआ'। अरे साब उसे तीन एडवेंचर या तीन लेवल पार ही तो करने थे, तभी तो वह अपनी इन्सानी दुनिया में जा पाती। अब यह 'पार हुआ' तो इसमें किसी को क्या आपत्ति होनी चाहिए। पर शिक्षक महोदय की नज़र में यह 'पूरा हुआ' ही होना चाहिए। उनका तर्क यह भी था कि बच्ची ने 'पहले लेवल' के लिए 'पूरा हुआ' का इस्तेमाल किया है, इसलिए दूसरे लेवल के लिए 'पार हुआ' कहना असंगत है।

कहानी में, जब तीसरे लेवल में बॉस आया तो 'नीना और मॉन्स्टर ने बॉस को हरा दिया'। सम्पादक महोदय को इसमें फिर कसर नज़र आई और उन्होंने सुधारा – नीना और मॉन्स्टर ने 'मिलकर' बॉस को हरा दिया। अरे भई बच्ची ने भी तो यही लिखा। यह तो सम्पादक का मानना है कि जब

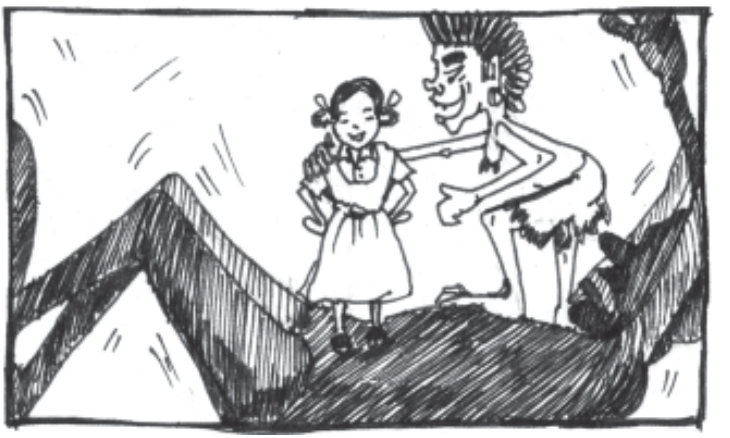

तक 'मिलकर' शब्दशः न लिखा हो इसका होना प्रतीत नहीं होता। बच्ची भाषा के साथ-साथ भावनाओं, कल्पनाओं और मूल्यों के प्रति भी उतनी ही सजग और समृद्ध है। वह जब लिखती है कि 'नीना और मॉन्स्टर ने बॉस को हरा दिया' तो वह बिलकुल साफ है कि मिलकर हराया। पर यह बात हमारी समझ में आती नहीं।

कहानी में अब कमाल देखिए, तीसरे लेवल की बात है – जब बॉस हार गया तो उसने एक गोला बनाया, वह बोला, 'ये तुमको इन्सानी दुनिया में पहुँचाएगा। फिर वो चली गई।' सम्पादक महोदय ने सुधार किया 'इस तरह नीना चली गई'। जाने उन्हें यह स्पष्ट करने की ज़रूरत क्यों पड़ी कि 'इस तरह नीना चली गई।' जबकि पूरी कहानी उसके वापस जाने की शर्तें पूरी करने के रोमांच और उसकी मशक्कत से भरी पड़ी है। इस तरह नीना वापस जा पाई, यही तो कहानी है।

सम्पादक महोदय इसे और शब्दों में साफ करने की कोशिश कर रहे हैं जबकि बच्ची ने तो अपनी बात आसानी से पूरी कर, कहानी खतम कर दी।

यह पूरी कवायद भाषा, मनोभावों, कल्पनाओं, मूल्यों, दृश्यों के समायोजन, कहन की विविधता, उसके स्वीकार और सम्पादन के टकराहट की जान पड़ती है। पर मज़ेदार बात यह है कि एक 8 साल की बच्ची अपनी अभिव्यक्ति में बहुत ही प्रखर और तार्किक है, साथ ही भाषा में किफायत की हिमायती भी। पर सम्पादन का कौशल रखने वाले हम वयस्क भाषा को यंत्रवत इस्तेमाल करने के बीमार हैं। हमारा नज़रिया निहायत रूढ़ और हमारा भाषाई कौशल रटा रटाया है।

बच्चों के लेखन को देखते समय हमें बच्चे के साथ होने की ज़रूरत है, उसमें भाषाई तत्व से ज़्यादा मानवीय तत्वों को तरजीह देने की ज़रूरत है। बच्चे अपनी बात अपने मनोभावों, मूल्यों, सहज समझ और सरल तर्कों के प्रवाह में कह रहे होते हैं। वे तो कहन के कैनवास पर घटना और रोमांच का कोई डिज़ाइन उकेर रहे होते हैं। पर हम भाषा की बुनावट में सिर्फ शब्दों और वाक्यांशों का ताना-बाना ही साध रहे होते हैं।

---

**अनिल सिंहः** वंचित तबके के बच्चों के साथ काम करने वाली संस्था 'मुस्कान' के साथ लम्बे समय तक काम किया है। वर्तमान में आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल से जुड़े हैं। कहानी प्रस्तुति में विशेष रुचि।

**सभी चित्रः हीरा धुर्वेः** भोपाल की गंगा नगर बस्ती में रहते हैं। चित्रकला में गहरी रुचि। साथ ही 'अदर थिएटर' रंगमंच समूह से जुड़े हुए हैं। वर्तमान में रियाज़ अकेडमी, एकलव्य से इलस्ट्रेशन का कोर्स कर रहे हैं।